ISSN: 2393-8900 IMPACT FACTOR : 2.7825(UIF) VOLUME - 10 | ISSUE - 5 | JANUARY - 2024

HISTORICITY RESEARCH JOURNAL

भारतीय इतिहास में मराठों का यश अटक के उस पार

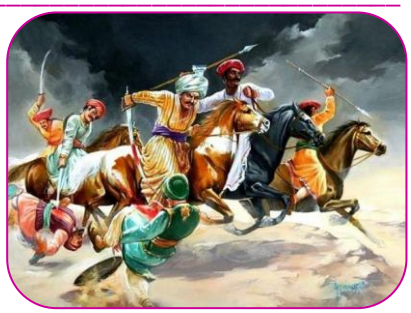

डॉ. सहदेवसिंह चौहान
शोध अधिकारी, मध्यकालीन इतिहास,
श्री नटनागर शोध संस्थान, सीतामऊ जिला मन्दसौर, (म.प्र.)

सारांश

भारतीय इतिहास में मराठों को कभी ऐसा य"ा प्राप्त नहीं हुआ था, जितना अटक के उस पार पहुँचने एवं पानीपत की रणभूमि में। यहाँ दक्षिण के वीर स्वाहा हो गये। सुंगधित पुष्प नष्ट हो गये, ऐसे शत्रु से लड़ते हुए जो उनके दे"ा और धर्म का विरोधी था। हम तो यह कहकर रहेगें कि जो कार्य छत्तीसकुली राजपूत न कर सके वह इन वीरों ने कर दिखाया।

दस शताब्दियों से चलने वाला हिन्दू–मुस्लिम महायुद्ध साधारणतः 16वीं शताब्दी पार कर 17वीं शताब्दी में पदार्पण करने जा रहा था। ध्यान देने की बात यह है कि इतनी शताब्दियॉ निरन्तर युद्ध में व्यतीत हो जाने पर भी उत्तर और दक्षिण दे"ा के दोनों भागों में हिन्दू राष्ट्र नाम"ोष न हो सका। यद्यपि वह समग्र ए"िाया खण्ड के अरब, अफगान, पठान, तुर्क और मुगल आदि विभिन्न मुस्लिम जमातों के भीषण धार्मिक एवं राजनैतिक आक्रमणों से जर्जर हो उठा था। यही नहीं, उस आहत अवस्था में भी वह रणांगण पर पूरे उत्साह के साथ जूझता रहा। जूझते–जूझते अब तो भारत के अधिष्ठाता देवता को एक ऐसे अलौकिक अभूतपूर्व हिन्दू व"ा के सर्जन (अग्निकुल की कथा) की तीव्र आव"यकता प्रतीत हुई, किन्तु इस मुस्लिम सत्ता का समूल उच्छेद करना केवल चार दैवी पुरुषों के द्वारा हो सकने की बात न थी, उसके लिए तो दैवी पुरुषों की एक वि"ाल जाति ही आव"यक थी और वह थी महाराष्ट्र की मराठा जाति, जिसने एक ही छलांग में पूना से लेकर अटक तक दस शताब्दियों के बाद हिन्दुओं का बदला लिया और काबुल, कन्दहार तक मुस्लिम सैना पर चढ़कर सारे हिन्दुस्तान की वास्तविक साम्राज्य सत्ता उन मुसलमानों के हाथों से छीन ली।

सातवीं शताब्दी से सत्रहवीं शताब्दी तक यही बात देखी गयी कि जहां–जहां हिन्दू और मुसलमानों की प्रचण्ड सेना लड़ी–दोनों के बीच राज्य और राष्ट्र के लिए निर्णायक, परिणामकारी युद्ध हुए, वहां अन्ततः कुछ अपवाद छोड़ सर्वत्र हिन्दू सेना की पूर्ण पराजय होती रही फिर कारण भले ही कोई हाथी पर बैठा इसलिए या कोई पालकी में बैठा इसलिए, कहीं किसी के द्वारा अकस्मात वि"ावासघात हुआ इसलिए या कहीं विजय हाथ में आने की स्थिति में अकस्मात किसी अदृष्ट के कारण वैसा बना ऐसा हुआ हो। किसी भी हेतु से अन्ततः पराजय हिन्दुओं के ही पल्ले पड़ती और विजय का सेहरा मुस्लिम सेना के ही सिर बंध जाता। रण देवता का यही निष्ठुर और कठोर अन्तिम निर्णय हुआ करता। वीर राजा दाहिर की लड़ाई,[1] वीर जयपाल की लड़ाई,[2] वीर आनंदपाल की लड़ाई,[3] सम्राट पृथ्वीराज का अन्तिम समर,[4] महाराणा सांगा द्वारा लड़ा गया युद्ध,[5] शताब्दियों तक के इन सभी निर्णायक युद्धों से लेकर विजयनगर के वीर रामराजा की तालिकोटि की लड़ाई,[6] तक प्रत्येक निर्णायक युद्ध में निष्ठुर रण देवता का झुकाव हिन्दुओं के पक्ष में प्रतिकूल ही सिद्ध हुआ। उन सभी संग्रामों में हिन्दू पक्ष की अटल पराजय देखी गयी।

पृथ्वीराज रासो में हिन्दू मुसलमानों के इन युद्धों का महाभारत शैली पर वर्णन किया गया है। उसमें चन्द बरदाई ने भी हिन्दुओं की इसलिए भी बहुत अधिक स्तुति की है कि उन्होंने मुहम्मद गोरी को हरा कर कई

बार जीते जी छोड़ दिया। कवि का अभिमत है कि यह बात हिन्दुओं के वीरधर्म के लिए परम गौरव की वस्तु रही। किन्तु 'हिन्दुस्तान पर मैं पुनः कभी चढ़ाई नहीं करूंगा, बड़े प्रेम से बरताव करूंगा' स्वयं दिया हुआ वचन भंग कर जब सन् 1192ई. में मुहम्मद गोरी ने पुनः पृथ्वीराज पर चढ़ाई कर दी, तो उसी चन्द बरदाई ने बड़े क्रोध से यह भी लिख दिया कि हम हिन्दुओं को धर्म–अधर्म या सत्य–असत्य की परवाह रहती है, दुष्कृत्यों से लाज लगती है; लेकिन ये म्लेच्छ मूलतः ही निर्लज्ज हैं – **'निर्लज्ज म्लेच्छ लजै नहीं हम हिन्दू लजवान।'**

वचनभंग ही मुसलमानों के लिए धार्मिक कर्तव्य होता था। मुहम्मद गोरी ने वैसा वचन भंग बार–बार किया इसलिए तो वह मुसलमानों का 'गाजी' बन गया। हिन्दुओं को यह नग्न सत्य अपने हृदय पटल पर उत्कीर्ण कर रखना चाहिए। जिन मुसलमानों ने चन्द बरदाई के शब्दों में 'अधर्म्य' वचन भंग किया, उन्हीं को भगवान ने सफलता दी और जिन्होंने वैसा कोई भी वचन भंग नहीं किया और शत्रु को प्राणदान का भावुक औदार्य दिखलाया, उन हिन्दुओं को उस तथाकथित धर्म के पैरों तले रौंद डाला।

मुहम्मद गोरी ने विजय प्राप्त होत ही सारे नगर दिल्ली को भरपेट लूटा, मार काट की और आगजनी की। फिर वहां इस्लामी शासन की घोषणा कर कुतुबुद्दीन नामक अपने एक वि"वस्त गुलाम कारभारी को वहां का मुख्य अधिकारी शासक न्यिूक्त किया और स्वयं गजनी लौट गया[7]। दिल्ली विदे"ाी दासता की गुलाम बन गयी। कम बे"ाी छह सौ वर्षों तक उसी परकीय दासता में ही अनेक मुस्लिम सुलतानों एवं बाद"ाहों के शासन में (बीच–बीच के अपवादों[8] को छोड़ दे तों) वह पिसती रही जब तक कि आखिर में मराठों ने अटक से कटक के परले पार तक मुस्लिम साम्राज्य सत्ता को उखाड़ उसे सच्चे अर्थ मे हिन्दू सम्राज्य दासी नहीं बना लिया।

सत्रहवीं शती के प्रारम्भ से, अर्थात ि"ावाजी के जन्म से ही हिन्दू–मुसलमानों के संघर्ष में रणदेवता के इस निर्णय में अकस्मात एक आ"चर्यजनक प्रभेद, परिवर्तन देखा जाने लगा। जहां पहले हिन्दू–मुस्लिम संघर्ष में अटल रूप से अन्तिम पराजय हिन्दुओं की हुआ करती, वहीं अब ठीक उससे विपरीत अटल अन्तिम पराजय मुसलमानों की और अन्तिम विजय हिन्दुओं की देखी जाने लगी। न केवल स्थल युद्धों में प्रत्युत पि"चम सागर से पूर्वी सागर तक के शताधिक सागर समरों में भी पंजाब से दक्षिण समुद्र तक मराठों ने मुसलमानी सेना का डटकर पराभव किया। इसका एक मुख्य कारण यह था कि मराठों ने अपने साहसी पराक्रम से क्षत्रियत्व की विकृत निष्ठा और सदगुण विकृती की महामारी को अपने जीवन से सर्वथा मिटा डाला, अर्थात जैसे को तैसा की परिपाटी का श्रीगणे"ा हुआ। इसी के फलस्वरूप हर मोर्चे पर विजय श्री उन्हीं को जयमाला पहनाने के लिए उतावली रहती।

हिन्दू समाज में यह आक्रामक प्रवृत्ति पुनः संचारित करने का प्रयोग मराठों से पहले विजयनगर राज्य की स्थापना के समय एक बार हो चुका था और उसे हिन्दुओं ने मुसलमानों के विरुद्ध पूरी तरह सफल कर दिखया था।

उन दिनों सारे भारत के हिन्दू समाज में जो अधिका"ातः भयग्रस्त हो गया था, पुनः धैर्य संचार करने के लिए समर्थ रामदास स्वामी ने सह्याद्रि की एक–एक चोटी से घोषणा की कि– **धर्मासाठी मरावें। मरोनि अवध्यांसि मारावे। मारितां मारितां ध्यावे। राज्य आपुले।।** (धर्म के लिए मरें, मरकर सबको मारें और मारते–मारते अपना राज्य हस्तगत कर लें)

ध्यान देना होगा कि अल्प स्वल्प सेना के बल पर मुगलों के प्रचण्डतम सैन्य का सफाया करते–करते जब मराठी सेना वृद्धिगत होती गयी तब उनके हाथों बड़े राज्य, दुर्ग, प्रदे"ा आदि आते हुए उनका व्याप बढ़ता गया,[9] तब भी उन राज्यों की सेनाएँ अपने स्थान की रक्षा मात्र करती छोटी–बड़ी राजधानियों में खाती–सोती कभी पड़ी नहीं रहीं। प्रत्युत उस सेना का भी प्रत्येक सैनिक पड़ोस के या दूर के मुस्लिम अधीन प्रदे"ा पर सदैव दृष्टि लगाये रहता। वर्षा समाप्त होने के साथ वह उन प्रदे"ाों पर टूट पड़ता, छापे मारता और अपनी उस जागीर, जमींदारी या किले पर मुस्लिम शत्रु के आक्रमण से पूर्व ही वह अपने सामने के मुस्लिम प्रदे"ा में घुस पड़ता। मराठों पर आक्रमण न करने वाले मुस्लिम निजाम, नवाब आदि शत्रुओं को भी खोज–खोज कर उन्हें घर से बाहर निकाल ये मराठे सैनिक उन पर टूट पड़ते। इन मराठे वीरों का सच्चा पता उनकी छोटी–मोटी राजधानियों में, गढ़ों में या गुहाओं में या उनके निवास स्थानों में कभी नहीं लग पाता। मुसलमानों पर आक्रमण करते हुए निकलने वाले वृक–युद्ध कु"ाल ये मराठा सैनिक मानों घोड़ों की पीठ पर ही अपनी राजधानी रख लेते और मुस्लिम अधीन प्रदे"ाों में, दूर–दूर के प्रदे"ाों में मारकाट और लूट करते निकल जाते। अब मराठों का न कोई मालिक था और न उनकी कोई केन्द्रीय सरकार थी। अब प्रत्येक मराठा सेना नायक अपने अपने सैनिकों को लेकर दे"ा के विभिन्न भागों पर चढ़ाई करता था। इन अनेक मराठी सेनापतियों एवं वीर भटों का पक्का पता

उनके अपने घर या गढ़ियॉ नहीं, अपितु मुगलों के प्रदे"ाों में आयोजित उनके युद्ध ि"ाविर उनकी चलती–फिरती छावनियॉ ही हुआ करती थीं। अब लड़ाई ने लोकयुद्ध का रूप धारण कर लिया था।[10]

मराठों के इस मार–भाग के बार–बार के आक्रमणों से मुगल सेनानायकों के पारस्परिक द्वेष और ईर्ष्या के कारण उनकी परिस्थिति ठीक उसी प्रकार बिगड़ चुकी थी, जैसे नेपोलियन के सोनानायकों की पारस्परिक ईर्ष्या से स्पेनिक युद्ध में फ्रांस की स्थिति। अब यह सैनिक समस्या नही थी। अब तो प्र"न यह था कि दक्षिण की जनता से मुगल साम्राज्य कब तक युद्ध करता रहेगा और दोनों में से किसके पास अधिक साधन है।[11] हालत यह थी कि औरंगजेब स्वयं सेना संचालन करता था तो, कुछ हो जाता था वरना नहीं। सतारा, पार्ली, पन्हला, खेलना, कोन्डन (सिंहगढ़), रायगढ़, तोरना, बगिन्जरा इन आठ किलों के घेरों में ओरंगजेब को साड़े पॉच साल (1699–1705) लगे थे।[12]

मराठों के अकस्मात टूट पड़ने के बाढ़ की तरह नित्य नये समाचार हड़बड़ाये औरंगजेब के कानों पर आते रहते। औरंगजेब की मृत्यु के बाद अन्ततः जलते अंगारे की तरह हाथ में लिये महाराष्ट्र को मराठों के हाथ में फेंक झुलसी हुई वह वि"ाल मुस्लिम मुगल सेना अति त्वरा के साथ स्वयं पीछे मुड़कर दिल्ली की ओर निकल गई।[13]

जिंजी से गुजरात और मध्य प्रांत तक मराठों के राज्य स्थापित हो गये, तब तो ये मराठे और भी भीषणता के साथ **'हिन्दूपद पादशाही'**[14] के ध्येय की सिद्धि के लिए शेष मुस्लिम प्रान्तों पर स्वयं अपनी ओर से आक्रमण करने लगे और उनका सफल नेतृत्व बाजीराव प्रथम जैसा रणधुरन्धर और राज्य संचालक पुरुष करता रहा[15]। सारे भारत खण्ड पर 'हिन्दूपद पाद"ाही' की स्थापनार्थ जितना मिला उतना ही जतन करने से चल नहीं सकता था, प्रत्युतः बाहर निकलकर **'पुढ़े अधिक मेलवावे'** – आगे भी बढ़ाया जाए।'

बाजीराव प्रथम द्वारा दिल्ली तक किये गये आक्रमणों[16] से मुगल बाद"ाही इतनी झकझोरी जा चुकी थी कि उसके एक–एक जोड़ ढोले पड़ गये और अब मराठा सेना दिल्ली से आगे पंजाब में भी आक्रमण"ाील हो गयी। यह समाचार पि"चम के परवर्ती मुस्लिम राज्यों तक पहुॅच गया। फलतः काबुल, गजनी, ईरान, तूरान, बल्ख, बुखारा, अरब आदि मुस्लिम राजसत्ताओं को भी मराठों की अदम्य शक्ति की दह"ात बैठे बिना नहीं रही।

पि"चम हिमालय से उतर–उतर कर मुस्लिम आक्रान्ताओं के हिन्दुस्तान पर आक्रमण करने से पूर्व कोई भी तत्कालीन हिन्दू शासक स्वयं पि"चमी हिमालय पार कर ईरान, तूरान, अरब स्थान पर आक्रमण नहीं कर सका। कोई भी हिन्दू राजा इन मुस्लिम आक्रान्ताओं को उनके घरा में ही कूट–कूट कर सीधा न कर पाया था। जैसे ही मराठों के प्रबल आक्रमणों से दिल्ली के कंगूरे गिरने लगे, तभी से एि"ाया की इन मुस्लिम जातियों की जब तब आक्रमण करने की आदत छूट गयी। फिर भी ईरान का नादिर शाह और अहमद"ाह अब्दाली इसके अपवाद हुए।

ज्यों ही पता चला कि मराठे उत्तर की ओर आ रहे हैं, नादिर"ाह का सारा उत्साह ठण्डा पड़ गया। मराठों के दिल्ली पहुॅचने के पूर्व ही नादि"ाह ने अपना बोरिया बिस्तर बॉध लिया। दूर की सोचकर उसने स्वयं ही बाद"ाह का तख्त छोड़ दिया और पुनः उस पर पुराने मुगल बाद"ाह को बैठा दिया। साथ ही राजा–रजवाड़ों को यह कठोर आदे"ा दे गया कि आप लोग बिना कुछ ना नुपुर किये मुगल बाद"ाह की आज्ञा का पालन करें।[17]

सन् 1747 ई. में नादिर"ाह मारा गया और उसके स्थान पर अहमद"ाह अब्दाली काबुल में राजधानी बना स्वयं को बाद"ाह घोषित कर दिया।[18] इधर मराठा सेना स्थान–स्थान पर हिन्दू राज्यों की स्थापना करती दिल्ली पहुॅच गयी। स्थिति यहां तक पहुॅच गयी कि दिल्ली की राजनीति का एक पत्ता भी मराठों की मदद के बिना हिल नहीं पाता था। सारे मुस्लिम दल पहले तो मराठों को बाद"ाही से एकदम उखाड़ फेंकन के लिए आपस में सहमत हो जाते थे, पर आगे चलकर मुसलमानों की स्वाभाविक फूट और 'डयंत्र की मनोवृत्ति के कारण अपना–अपना पक्ष बढ़ाने के लिए गुप्त रूप से मराठों की मदद लेकर आपस में ही एक दूसरे को गिराने का यत्न करने लगे। दिल्ली के इस उलटफेर की ओर अब्दाली का पूरा ध्यान था। इधर रुहेले और पठान भी इस चिन्ता में थे कि जिस किसी तरह मुगल बाद"ाही को उखाड़कर सारे हिन्दुस्तान पर पुनः अपनी पठानी बाद"ाही स्थापित कर दी जाये, अन्यथा मराठे हमारा अस्तित्व ही न रहने देंगे। अब्दाली इन्हीं की जाति का था। अभी–अभी बाद"ाह बना था और आज तक उनकी इस राजनीति में पूरा–पूरा साथ देता रहा था। इसलिए इन रुहेलों और पठानों ने उसे अनेक पत्र भेज प्रार्थना की कि **'हिन्दुस्तान में इस्लाम को जीवित रखना चाहते हो तो आप रक्षार्थ शीघ्र आवें।'**[19]

अन्ततः जनवरी 1748 ई. को समुचित अवसर देख लाहौर तक आ धमका, किन्तु मुगल सेना ने लाहौर के पास ही पराजित कर दिल्ली आने का मार्ग रोक दिया।[20] इसी बीच मुगल बाद"ाह अहमद"ाह ने (1752 ई.) मराठों से अत्याग्रह कर सन्धि की और उसके फलस्वरूप पे"ावा को लड़खड़ाते हुए साम्राज्य की शत्रुओं से रक्षा करने, चाहे वह अब्दाली जैसा विदे"ाी आक्रान्ता हो या जाट, रुहेले और सिक्खों जैसे घरेलू विद्रोही हों, इसके अतिरिक्त पंजाब, सिंध के सूबों से चौथ लेने का अधिकार भी दिया गया।[21]

इस दायित्व को स्वीकार करने का सामर्थ्य हिन्दू पद पाद"ाही की स्थापना को क्रम"ाः साकार बनाने वाले हिन्दुओं के बीच एक मात्र मराठों के ही कलाई में था।[22] इस सन्धि की सुनगुन अब्दाली को लग गई थी । इसलिए उसने केवल मराठों का प्रतिरोध करने के लिए दूसरी बार चढ़ाई की। मुगल अधिकारी मीर मन्नू ने विव"ा होकर अब्दाली को ठटठा, सिन्ध और पंजाब के सूबे तथा आसपास के प्रदे"ा दे डाले[23] मुगल अधिकारी के इस धोखे के व्यवहार से और स्वयं बाद"ाह द्वारा भी गुप्त रूप से इसे मान्यता देकर किये गये वि"वासघात से मराठे चिढ़ गये। सर्प की पूंछ पर जानबूझकर पैर रखने की तरह, बाद"ाह के साथ मराठों की हुई संधि को तुच्छ मान जिस अब्दाली ने इन प्रदे"ाों को छीना था उससे प्रति"ोध लेने के लिए आपे से बहार हो उठे।

अहमद"ाह अब्दाली एकदम असली तुर्क, ईरानी, तूरानी पठानों से संमिश्र हजारों की संख्या में सेनाएँ लेकर एक बार नहीं तीन–तीन बार हिन्दुस्तान पर चढ़ आया, किन्तु प्रत्येक बार उस मराठों के स"ास्त्र प्रत्याक्रमण से बुरी तरह मात खाकर हिन्दुस्तान से निकल जाना पड़ा। जय–पराजय के उलटफेर में पानीपत के बाद भी अन्त में इस शाह को मराठों से यह सन्धि करनी पड़ी, कि सारी मुस्लिम बाद"ाही सत्ता का सम्पूर्ण संचालन मराठों के हाथ में बना रहे, हम उसमें तनिक भी हस्तक्षेप न करेंगे।[24] इस तरह अन्ततः उसे दिल्ली का स्वेच्छाचारी बाद"ाह बनने की अपनी महत्वाकांक्षा को तिलांजलि देकर मराठों के सामने फिर सिर झुकाना ही पड़ा।

हमारे इस विवेचन से कम से कम उन स्वदे"ाी इतिहासकारों की तो ऑखें खुल ही जाना चाहिए, जो मराठों के साथ हुए निर्णायक युद्ध में मुसलमानों की करारी हार पर विदे"ाी इतिहासकारों के घृणित अनुकरण की अपनी सहज दासता दिखाते हैं।

यदि अब्दाली मराठों का प्रभुत्व नष्ट करने में सफल हो जाता, तो सारे हिन्दुस्तान में पुनः मुस्लिम बाद"ाही स्थापित हो जाती। फिर इन हिन्दू राजपूतों और उत्तर के आकर्मण्य हिन्दुओं के जो मराठों से व्यर्थ ही द्वे"ा करने में दे"ा–धर्म की भी परवाह न करने की नादानी दिखा रहे थे, पल्ले क्या पड़ता, केवल किसी नये अलाउद्दीन या किसी नये औरंगजेब का मुस्लिम साम्राज्य, हिन्दू धर्म और हिन्दू राज्यों पर भयानक अत्याचार और लाखों हिन्दुओं का रक्तपात ही न ? फिर भी लाखों–करोड़ों असंगठित हिन्दू जनता की, जिसके हृदय में मुस्लिम सत्ता का सत्याना"ा होने की गुप्त तड़पन थी, जिसे वि"वास था कि यह काम केवल हिन्दू मराठे ही कर सकते हैं और इसलिए जो चातक की तरह उनको उत्कट प्रतीक्षा कर रही थी, पर स्वयं असंघठित होने से कुछ प्रतिकार करने में असमर्थ थी।

रघुनाथराव दादा के नेतृत्व में वि"ाल मराठा सेना ने उत्तर की ओर कूच किया।[25] मराठा सरदारों और वजीर गाजीउद्दीन आदि के पत्र दिखाते हुए पे"ावा ने उन्हें स्थिति की गंभीरता से भली भांति परिचित करा दिया। तद्नुसार सबसे महत्व की बात यह थी कि मराठों का कट्टर शत्रु और अब्दाली का दाहिना हाथ नजीब खां जीवित पकड़ लिया गया।[26] फलस्वरूप अब्दाली ने स्वयं को उस प्रदे"ा का बाद"ाह मानकर जो व्यवस्था की थी, वह सारी चूर–चूर हो गई। दिल्ली क आगे सरहिन्द में अब्दाली ने अपनी रक्षा के लिए दस हजार सेना समद नामक सेनापति के अधीन रख छोड़ी थी। यह समाचार मिलते ही उसका भी धैर्य छूट गया[27] इतने में मराठे सरहिन्द पर चढ़ आये और घोषित युद्ध से पूर्व ही धांधली मचाकर छोटी–मोटी लड़ाइयों द्वारा उन्होंन उनकी धुर्रियां उड़ा दीं। समद को जीवित पकड़ लिया गया।[28]

ज्यों ही यह समाचार अब्दाली के पुत्र तैमूर "ाह को और उसके सेनापति जहान खां को मिला, तो तत्काल उन्होंने लाहौर में निर्णायक लड़ाई का विचार त्याग कर काबुल की ओर भाग गये क्योंकि मराठों के वेगवान आक्रमण का सामना करने की हिम्मत नहीं बची थी और फिर मराठा सेना लाहौर पहुॅचने वाली थी। मराठा सेना लाहौर और उसके आगे भी घुसकर मुस्लिम सेना का डटकर पीछा किया।[29] फलस्वरूप तैमूर की यह द"ाा हुई कि अभी हाल ही में भारत से लूटी गई सम्पत्ति तथा हाथी, घाड़े, बकरी आदि सारी की सारी जहां के तहां छोड़ वह अटक पार अपने दे"ा में भाग गया। उसके पास और कुछ नहीं एकमात्र वस्तु अपने प्राण ही शेष रहे। छोटी–बड़ी सब वस्तुऍ मराठों ने या तो लूट लीं या नष्ट कर दीं।

इस तरह अहमद"ाह अब्दाली का छच्छनास्पद पराभव कर माराठां ने उस अफगान शत्रु द्वारा सिंध से मुलतान तक और मुलतान से सरहिन्द तक का विस्तृत प्रदेष पुनः जीत लिया।[30] आगे की सीमा विजय का कार्य मराठों के अनेक सैनिक टुकड़ियों को सौंप कर विजित प्रदे"ा में मराठा सत्ता की स्थिति सुदृढ़ करने के लिए रघुनाथराव दादा लाहौर की ओर लौटा और 11 अप्रैल 1758 ई. के दिन उसने मराठी सेना के साथ पंजाब की मुख्य राजधानी लाहौर में विजय प्रवे"ा किया।[31]

हिन्दुओं के मराठों के, विजयोत्सव की यह सभा और यह दीपोत्सव कहॉ मनाया गया ? लाहौर के उसी शालीमार बाग के भव्य मैदान में, जो किसी समय मुगल राजव"ा के अकबर, औरंगजेब जैसे बड़े–बड़े मुगल बाद"ाहों का सुप्रसिद्ध विलास स्थान रहा। इस तरह मराठों ने मुस्लिम राजसत्ता को अपनी दासी बना लिया।[32] तुकोजी होलकर, रायजी सखदेव, रेंकोअनाजी, साबाजी सिंधिया और गोपाल राव बर्वे के अधीन छोड़ी गई मराठा सेना ने सिंधु नदी के परिसर को लांघकर अटक नगर के गढ़ पर ही चढ़ाई कर दी और सन् 1758 ई. की जुलाई में उसे जीत लिया।[33] गढ़ से मुसलमानों का हरा झण्डा उखाड़ कर हर–हर महादेव की गर्जना के साथ मराठों का, हिन्दुओं का भगवा ध्वज अटकगढ़ पर फहराने लगा। हिन्दू मराठा सेना के घोड़ों ने पुनः एक बार शान से भरपेट सिन्धु नदी का जल पिया। अटक के हिन्दुओं पर दस शताब्दियों से स्वयं ही लगाई हुई **'शास्त्रीय' अटक प्रतिबंध** भी हिन्दुओं के शस्त्रों ने, खड्ग ने अन्ततः उसी दिन तोड़ डाली। इतना ही नहीं, मराठों की सेना सिंधु को लांघकर परले पार कन्दहार तक म्लेच्छों का पीछा करती हुई पहुॅच गयी, और सारे हिन्दुस्तान की वास्तविक साम्राज्य सत्ता उन मुसलमानों के हाथों से छीन ली, जिन्होंने हमारे हाथों से छीनी थी।

संसार में जितने भी ख्याति प्राप्त दिग्विजयी सेनापति हो गये, रघुनाथराव ने उनकी पंक्ति में अपना नाम बड़े उज्जवल रूप में अंकित कर दिया। एक ही दौरे में पूना से सिन्धु नदी तक सफल अभियान कर दिखाया। सरदेसाई लिखते हैं – 'All Maharashtra felt electrified with the proud performance of Raghunath rao and his bands having reached the extreme frontier of India and bathed their horses in the Indus.'[34]

सन्दर्भ :–

1. द चंचनामा, एन एि"ायन्ट हिस्ट्री ऑफ सिंध, अग्रेजी अनुवाद मिर्जा कलीच वेग, कराची, 1900, पृ. 103–142.
2. द्विवेदी, हरिहरनिवास, दिल्ली के तोमर, विद्यामन्दिर प्रका"ान ग्वालियर, 1973, पृ. 215–19; हेग, लेफ्टिनेन्ट कर्नल वोल्सले, द कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया (तुर्क्स एण्ड अफगान्स), कैम्ब्रिज युनिवर्सिटी प्रेस, 1928, भाग 3, प्र. 17–19
3. द्विवेदी, हरिहरनिवास, दिल्ली के तोमर, विद्यामन्दिर प्रका"ान ग्वालियर, 1973, पृ. 220–25
4. मिनहाज उस सिराज कृत, तबकाते नासिरी, अंग्रेजी अनुवाद एच.जी. रैवर्टी नई दिल्ली 1970, भाग 1 पृ. 468–69; यहिया कृत, तारीखे मुबाकर"ाही अंग्रेजी अनुवाद के.के. वसु बड़ौदा 1932, पृ. 10; निजामुद्दीन अहमद कृत, तबकाते अकबरी अंग्रेजी अनुवाद बी.डे. कलकत्ता 1973, भाग 1 पृ. 39
5. ओझा, गौरि"ांकर हीराचन्द, उदयपुर राज्य का इतिहास, राजस्थानी ग्रन्थागार जोधपुर, 1996–97, भाग 1, पृ. 365–380
6. द कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया (तुर्क्स एण्ड अफगान्स), कैम्ब्रिज युनिवर्सिटी प्रेस, 1928, भाग 3, प्र. 449–50, 499; सरदेसाई, गोविन्द सखाराम, न्यू हिस्ट्री ऑफ द मराठाज, फोनेक्स पब्लिके"ान चिरा बाजार बाम्बे, 1946, भाग 1 पृ. 29.
7. निजामी, मोहम्मद खलिक अहमद, ए कम्प्रेहेन्सिव हिस्ट्री ऑफ इण्डिया (द दिल्ली सुल्तनत), पीपुल्स पब्लिके"ान हाउस, दिल्ली 1970, भाग 5, पृ. 204–06
8. मेरा शोध पत्र – हिन्दू साम्राज्य स्थापना की महान क्रान्ति, शीघ्र प्रका"ानार्थ
9. सरकार, यदुनाथ, शार्ट हिस्ट्री ऑफ औरंगजेब, एम.सी. सरकार एण्ड सन्स, कलकत्ता 1930, पृ. 317
10. सरकार, यदुनाथ, शार्ट हिस्ट्री ऑफ औरंगजेब, एम.सी. सरकार एण्ड सन्स, कलकत्ता 1930, पृ. 316–17
11. सरकार, यदुनाथ, शार्ट हिस्ट्री ऑफ औरंगजेब, एम.सी. सरकार एण्ड सन्स, कलकत्ता 1930, पृ. 226
12. सरकार, यदुनाथ, शार्ट हिस्ट्री ऑफ औरंगजेब, एम.सी. सरकार एण्ड सन्स, कलकत्ता 1930, पृ. 319
13. सरकार, यदुनाथ, शार्ट हिस्ट्री ऑफ औरंगजेब, एम.सी. सरकार एण्ड सन्स, कलकत्ता 1930, पृ. 375–82
14. सरदेसाई, गोविन्द सखाराम, न्यू हिस्ट्री ऑफ द मराठाज, फोनेक्स पब्लिके"ान चिरा बाजार बाम्बे, 1948, भाग 3 पृ. 225

15. सरदेसाई, गोविन्द सखाराम, न्यू हिस्ट्री ऑफ द मराठाज, फोनेक्स पब्लिके"ान चिरा बाजार बाम्बे, 1948, भाग 2 पृ. 135–63.
16. बाजीराव ने अपने भाई चिमनाजी अप्पा को लिखा, "मैं बाद"ाह को यह बतलाना चाहता हूँ की मैं हिन्दुस्तान (उत्तर भारत) मैं हूँ और मराठे दिल्ली दरवाजे तक जा पहुँचे हैं ———————— 26 जिलकदा मैं शाही मार्ग को छोड़ कूच दर कूच करता हुआ, एक दिन में 40 मील चलकर दो मंजिल में दिल्ली पहुँच गया (अप्रेल 1737 ई.) – इर्विन, विलियम, लेटर मुगल्स, सम्पा, सर यदुनाथ सरकार, एम.सी. सरकार एण्ड संस, कलकत्ता 1922, भाग 2, पृ. 288
17. इर्विन, विलियम, लेटर मुगल्स, सम्पा, सर यदुनाथ सरकार, एम.सी. सरकार एण्ड संस, कलकत्ता 1922, भाग 2, पृ. 375
18. सरकार यदुनाथ, फाल ऑफ द मुगल एम्पायर, एम.सी. सरकार एण्ड संस लि. कलकत्ता 1949, भाग 1, पृ. 108–09
19. सरदेसाई, गोविन्द सखाराम, न्यू हिस्ट्री ऑफ द मराठाज, फोनेक्स पब्लिके"ान चिरा बाजार बाम्बे, 1948, भाग 2 पृ. 358; फाल ऑफ द मुगल एम्पायर, भाग 1 पृ. 109
20. फाल ऑफ द मुगल एम्पायर, भाग 1 पृ. 122–29
21. न्यू हिस्ट्री ऑफ द मराठाज, भाग 2 पृ. 365–66; फाल ऑफ द मुगल एम्पायर, भाग 1 प. 202–04 सरकार ने लिखा है यह सन्धि उस नीति के सदृ"ा थी जो वेलेजली ने अपनायी थी।
22. फाल ऑफ द मुगल एम्पायर, भाग 2 पृ. 114 (1950)
23. न्यू हिस्ट्री ऑफ द मराठाज, भाग 2, पृ. 365
24. न्यू हिस्ट्री ऑफ द मराठाज, भाग 2, पृ. 396
25. न्यू हिस्ट्री ऑफ द मराठाज, भाग 2, पृ. 395; फाल ऑफ द मुगल एम्पायर, भाग 2 पृ. 98–101
26. न्यू हिस्ट्री ऑफ द मराठाज, भाग 2, पृ. 396–97
27. न्यू हिस्ट्री ऑफ द मराठाज, भाग 2, पृ. 399
28. न्यू हिस्ट्री ऑफ द मराठाज, भाग 2, पृ. 400
29. न्यू हिस्ट्री ऑफ द मराठाज, भाग 2, पृ. 399
30. न्यू हिस्ट्री ऑफ द मराठाज, भाग 2, पृ. 399–400
31. न्यू हिस्ट्री ऑफ द मराठाज, भाग 2, पृ. 399
32. न्यू हिस्ट्री ऑफ द मराठाज, भाग 2, पृ. 399
33. न्यू हिस्ट्री ऑफ द मराठाज, भाग 2, पृ. 400–01
34. न्यू हिस्ट्री ऑफ द मराठाज, भाग 2, पृ. 401